और यह हमारा राज्य को स्वीकार कर हम लोगों को कुछ कृतार्थ बनावें इत्यादि ।

सूरीश्वरजी ने लाभालाभ का कारण जान कर एवं ध्यान से निर्वृति पाकर आये हुये उन राजादि को कहा कि हैं राजन ! आप भले मेरा उपकार समझे, पर मैनें अपने कर्तव्य के अलावा कुछ भी अधिकता नहीं की हैं । क्योंकि हम लोगों ने स्वात्मा के साथ जनता के कल्याण के लिये ही योग धारण किया है । दूसरे आप जो रत्नादि द्रव्य और राज का आमंत्रण करते हैं वह ठीक नहीं क्योंकि अभी आपको यह ज्ञान नहीं है कि यह पदार्थ आत्म कल्याण में साधक हैं या बाधक ? इन पुद्‌गलिक पदार्थों एवं राज से हम निस्पृही योगियों को किसी प्रकार से प्रयोजन नहीं है इत्यादि ।

राजा मंत्री और नागरिक लोग सूरिजी महाराज के निसस्पृहता के शब्द सुन कर मंत्र मुग्ध एवं एकदम चकित हो गये और मन ही मन में विचार करने लगे कि अहो । आश्चर्य कि कहां तो अपने लोभानन्दी गुरु कि जिस द्रव्य के लिये अनेक प्रयत्न एवं प्रपंच कर जनता को त्रास देकर द्रव्य एकत्र करते हैं तब कहां इन महात्मा की निर्लोभता कि बिना किसी कोशिश के आये हुए अमूल्य द्रव्य को ठुकरा रहे हैं । वास्तव में सचे साधुओं का तो यही लक्षण है । हमें तो अपनी जिन्दगी में ऐसे निस्पृही साधुओं के पहिले ही पहल दर्शन हुये हैं । फिर भी दुख इस बात का है कि ऐसे परम योगीश्वर अपने नगर में कई अर्से से विराजमान होने पर भी हम हतभाग्यों ने और तो क्या पर दर्शन मात्र भी नहीं किया । इनके खान पान का क्या हाल होता होगा ? इस वर्षा ऋतु में बिना मकान यह कैसे काल निर्गमन करते होंगे इत्यादि, विचार करते हुए राजा ने पुन: प्रार्थना की कि हे

दयानिधी ! यदि इस द्रव्य एवं राज को आप स्वीकार नहीं करते हैं तो हमें ऐसा रास्ता बतलाइये कि हम आपके उपकार का कुछ तो बदला दे सकें ? क्योंकि हम लोग आपके आचार व्यवहार से बिल्कुल अनभिज्ञ हैं ।

सूरिजी ने कहा राजेन्द्र ! हम लोग अपने लिये कुछ भी नहीं चाहते है हम केवल जनकल्याणार्थ भ्रमण करते हैं । हमारा कार्य यह है कि उन्मार्ग से भवान्तर में दु:खी जीवों को सन्मार्ग पर लाकर सुखी बनाना । राजा तथा प्रजा द्वारा जैन धर्म स्वीकार करना यदि आप लोगों की इच्छा हो तो धर्म का स्वरुप सुन कर जैन धर्म को स्वीकार कर लो ताकि इस लोक और परलोक में आपका कल्याण हो । आचार्य भगवान की आज्ञा मानकर 3,84,000 राजपूतोने जैन धर्म अंगीकार किया । यह घटना वीर नि. सं. 70 की है ।

भवानी चामुंडा देवी का आचार्य भगवान द्वारा सच्चाय माता नाम रखना

आचार्यश्री उन नूतन श्रावकों को जैनधर्म का स्याद्वाद – तात्विक ज्ञान एवं आचार व्यवहार क्रिया काण्ड वगैरह ज्ञानाभ्यास करवा रहे थे । विशेषतया अहिंसा परमोधर्म: के विषय में उनके संस्कार इस कदर जमा रहे थे कि जीवों को मारना तो क्या पर किसी जीव को दु:ख पहुँचाना भी एक जबरदस्त पाप है इत्यादि सम्यक् ज्ञान धर्म का प्रचार कर रहे थे ।

जब आश्विन मास आया तो इधर तो सूरिजी ने ओली और सिध्दचक्र आराधन का उपदेश दिया, उधर पूर्वसंस्कारों की प्रेरणा से लोगों को देवीपूजन याद आ गया । वे लोग विचार करने लगे कि

इधर तो सूरिजी कह रहे हैं कि जीव हिंसा नहीं करना और उधर है देवी चामुण्डा । यदि इसको बलि न दी जाय तो अपने को सुख से रहने नहीं देगी ।

इस बात का विचार कर सब लोग एकत्र हो पूज्य आचार्य महाराज की सेवा में आये और हाथ जोड़ कहने लगे कि है पूज्यवर ! यहां की देवी भैंसे और बकरे का बलिदान लेती है और उन्हें मारने के समय स्वयं कौतूहल से प्रसन्न होती है । रक्तांकित भूमि पर आर्द्र चर्म देख खुश होती है और निष्ठुर हृदय वाले उसके भक्त उसे प्रसन्न करने के लिये ऐसे जघन्य कार्य करते हैं । इस पर आचार्यश्री ने कहा कि यह कार्य धर्म के प्रतिकूल एवं महाविभत्सतापूर्ण हैं, अतः आप जैसे धर्मात्माओं को उस देवी के मंदिर में नहीं जाना चाहिये । इस पर भक्त लोगों ने कहा कि हे प्रभो ! यदि हम उस देवी की इस प्रकार पूजा न करें तो वह देवी हमारे सब कुटुम्बों का नाश कर डालेगी । इस पर सूरिजी ने कहा कि तुम क्यों घबराते हो । मैं स्वयं तुम्हारी रक्षा करुंगा ! बस ! उन भक्त लोगोंने सूरिजी पर विश्वास कर देवी के मंदिर जाना एवं पूजा करना बंद कर दिया । जब देवी ने इस बात को अपने ज्ञान से जाना तो वह प्रत्यक्ष रुप से आचार्यश्री के पास जाकर कहने लगी कि हे प्रभो ! मेरे सेवकों को मेरे मंदिर में आने व पूजन करने से रोक दिया यह आपने ठीक नहीं किया हैं ? सूरजी ध्यान में थे अतः कुछ भी उत्तर नहीं दिया इसलिये देवी का क्रोध इतना बढ़ गया कि वह आचार्यश्री को किसी प्रकार से कष्ट पहुँचाना चाहने लगी । अहा ! क्रोध कैसा पिशाच है कि जिसके वश मनुष्य तो क्या पर देव देवी भी अपना कर्तव्य भूल कर अभिमानी बन जाते हैं । खैर देवी ने एक परोपकारी आचार्य को कष्ट देने का निश्चय कर

लिया । किन्तु आचार्य देव सदैव अप्रमत्तावस्था में रहते थे एवं आप श्रीमान इतने प्रभावशाली थे कि उनके अतिशय प्रभाव के सामने देवी का कुछ भी वश नहीं चला । फिर भी एक समय का जिक्र है कि आचार्यश्री अकाल के समय स्वाध्याय-ध्यान रहित कुछ प्रमाद योनि निद्राधीन थे । उस समय देवी ने उनकी आंखो में वेदना उत्पन्न करदी । सावधान होने पर आचार्यश्री ने जान लिया कि यह तकलीफ देवी ने ही पैदा की है । खैर ऐसा समझ लेने पर भी वे ध्यानस्थ हो गये । बाद चक्रेश्वरी आदि कई देवीयाँ सूरिजी के दर्शनार्थ आईं और सूरिजी के नेत्रों में वेदना देख अपने ज्ञान से सब हाल जान लिया और देवी चामुंडा को बुलाया एवं शक्त उपालम्ब दिया । अतः देवी प्रत्यक्ष रुप होकर सुरीजी से कहने लगी कि यह वेदना मैने ही की है और उसको मैं ही मिटा सकती हूँ । परन्तु आप मेरी प्रिय वस्तु जो करडमरड है वह मुझे दिला दीजियेगा । मैं शीघ्र ही इस वेदना को दूर कर दूंगी और यावचंद्रदिवाकर आपकी किंकरी होकर रहूँगी । यह सुन कर आचार्यश्री ने स्वीकार कर लिया कि मैं तुझे करड मरड दिला दूंगा । इस पर देवी संतुष्ट होकर सूरीजी की वेदना का अपहरण कर तथा चक्रेश्वरी देवी का सत्कार सन्मान कर अपने स्थान पर चली गई । बाद चक्रेश्वरी आदि देवीयाँ भी सूरीजी को वन्दन कर अदृश्य हो गई ।

प्रातःकाल गुरुजी के पास सब श्रध्दालु श्रावक एकत्रित हुए उसको कहा कि हे श्रावकों ! तुम सब सुहाली आदि पकवान तथा प्रत्येक घर से चंदन, अगर, कस्तूरी आदि भव्य भोग एकत्रित करो और इस प्रकार सब सामग्री सजा कर जल्दी ही पौषधागार (पौशाला) में एकत्र मिलो । बाद संघ को साथ लेकर चामुंडा देवी के

मंदिर चलेंगें । यह सुन कर श्रावक-गण सब सामग्री एकत्रित कर पौशाला में एकत्रित हुये और सूरिजी उन्हें साथ ले चामुंडा के मंदिर में गये । वहां पहुँजकर श्रावकों ने देवी के पकवान पूर्ण सुण्डकों (टोपले) को दोनों हाथों से चूर्ण कर पुन: बोले कि हे देवी अपना इष्ट-मिष्ट ग्रहण करो । यह सुन देवी प्रत्यक्ष रुप हो सूरिजी के सामने खड़ी रही और बोली कि है प्रभो ! मेरी अमिष्ट वस्तु 'कडड़ा मडड़ा' है । गुरु बोले हे देवी ! यह वस्तु तुझे लेना और मुझे देना योग्य नहीं क्योंकि मांसाहारी तो केवल राक्षस ही होते हैं । देवता तो अमृत पान करने वाले होते हैं । हे देवी ! तू देवताओं के आचरण को छोडकर राक्षसों के आचरण को करती हुई क्यों नहीं लजाती है ? हे देवी ! तेरे भक्त लोग भेंट में लाये हुये पशुओं को तेरे सामने मारकर तुमको इस घोर पाप में शामिल कर उस मांस को वे स्वयं खाते हैं, तू तो कुछ नहीं खाती अत:तू व्यर्थ हिंसात्मक कार्य को अंगीकार करती हुई क्या पाप से नहीं डरती है ? यह तो निर्विवाद है कि चाहे देवता हो चाहे मनुष्य हो पाप कर्म करनेवाले को भवान्तर में नरक अवश्य मिलता है । इस जीव हिंसा के समान भयंकर और कोई पाप नहीं है। यह बात सब दर्शनों (धर्म शास्त्रो) में प्रसिद्ध है । अत: तू जगत की माता है तो तेरा कर्तव्य है कि सब 'जीवों पर दया भाव रखना' और तू इसी 'अहिंसापरमोधर्म' का आश्रय ले इत्यादि । इस प्रकार सूरिजी के कथित उपदेश से प्रतिबुद्ध हुई देवी सूरिजी को कहने लगी, हे प्रभो ! आज से मैं संसार कूप में भी व्रतधारियों का सानिध्य करूंगी । किन्तु हे प्रात:स्मरणीय सूरिपुंगव ! आप यथा समय मुझे स्मरण में रखना और देवतावसर करने पर मुझे भी धर्मलाभ देना । अपने श्रावकों से कुकुंम, नैवेद्य, पुष्प आदि सामग्री से साधार्मिक

की तरह मेरी पूजा कराना इत्यादि । दीर्घदर्शी श्रीरत्नप्रभू सूरि ने भविष्य का विचार करके देवी के कथन को स्वीकार कर लिया । क्योंकि सत्पुरूष गुणग्राही होते हैं । पापों को खंडित करनेवाली वह चंडिका सत्य प्रतिज्ञा वाली हुई । यह जान उस दिनसे सच्चायीका नाम से प्रसिद्ध हुयी । इस प्रकार श्रीरत्नप्रभूसूरीश्वर ने देवी को प्रतिबोध देकर सर्वत्र विहार करते हुये सवा लाख से भी अधिक श्रावकों को प्रतिबोध दिया । और कहा कि आज से यह देवी ओसवालों की कुलदेवी कह लायेगी । उसी दिन सवा लाख श्रावकों को ओसवाल बनाया । उपकेशनगर का नाम औंसिया पड़ा । आचार्य रत्नप्रभू सूरी ने कहा, है देवी आज से तू सच्चायी माता है । इसलिए आज भी ओसिया माता को सच्चायी माता से जानते है ।

नाहर वंश का इतिहास

नाहर वंश, परमार राजपुत जाति से निसृत हुआ है । भीनमाल के परमार राजा भीमसेन के पुत्र उपलदेव ने उपकेशपट्टन नामक नगर बसाया । इस नगर का नाम कालान्तर में उपकेशपुर हुआ , वर्तमान में ओसियां है । राजा उपलदेव परमार (प्रमार) वंशीय राजपुत थे । ओसियां में चामुण्डा देवी का मंदिर बनाकर बलि आदि देकर पूजा करते थे । वीर निर्वाण सं. 70 (ईस्वी पूर्व 457 तथा विक्रम पूर्व 400) में पार्श्वनाथ भगवान के छठे पट्टधर आचार्य रत्नप्रभसूरि ने उपलदेव सहित उपकेशपुर के लाखों लोगों को जैन धर्मावलम्बी बनाया इन्हें ओसवाल महाजन जैन कहा गया । उपलदेव को श्रेष्ठी गोत्र दिया गया । अन्य समूह के लोगों को अन्य

गोत्र दिये गये । आचार्य रत्नप्रभसूरि ने कुल 18 गोत्र बनाई जो ओसवालों की मूल गोत्र कहलाती हैं । कालान्तर में इन 18 गोत्र की 498 उप–गौत्र निसृत हुई ।

आ. रत्नप्रभसूरि ने चामुण्डा देवी को सचियामाता नाम देकर ओसवालों की कुल देवी घोषित तथा बलि आदि प्रथा बन्द कराई ! राजा उपलदेव , जो अब श्रेष्ठी गोत्रीय ओसवाल जैन बन गये थे, ने ओसिया में एक जैन मंदिर बनवाया जो आज भी विद्यमान है । उपलदेव के मंत्री उहूड भी जैन बन गये थे, उन्होंने मंदिर प्रतिष्ठा में अतुल्य योगदान दिया ।

परमार राजा भारत के कई राज्यों में राज करने लगे । उनके प्रथम राजा एवं उनकी वंशावली की खोज आज भी हमें मिलती है । इस वंश के राजा –

१) प्रथम परमारजी थे ।

२) पंखाजी

३) परखाजी

४) स्थामरखजी

५) धूमरिखजी

६) भरिउजी (भीमजी)

७) बहिन्दजी

इस प्रकार पीढ़ीयाँ गुजरती गई । फिर 35 वी पीढी में आसधर जी हुए थे जो देपालजी के पुत्र थे। कालान्तर में परमार राजा भारत के कई राज्यो में राज्य करने लगे ।

वीर निर्वाण 70 वर्ष (इसवी पूर्व 457 तथा विक्रम पूर्व 400)

मे आचार्य देव श्रीमद् रत्नप्रभू सूरिश्वर जी हुए थे ।

परमारों की नौवीं पीढ़ी में धीररावजी राजा ने राज्य किया । इसी परमार वंश की 16 वी पीढ़ी में राजा प्रेमरावजी हुए जिन्होंने खम्बाज राज में राज्य किया तथा चक्रवर्ती कहलाये । फिर 31 वी पीढ़ी में राजा विजयपालजी हुअे जो खम्बाज छोडकर कुपनगर में राज्य करने लगा । 32 वी पीढ़ी में महाभीषण 33 वी पीढ़ी में राजा भीमरावजी और ३४ वी पीढ़ी में राजा देपालजी हुए थे । कहते है कि इस काल तक उस वंश ने जैन धर्म से विमुख होकर मांस भक्षण, शिकार हिंसा आदि प्रारम्भ कर दिया था ।

आचार्य मानदेव सूरि भगवान महावीर के 22 वे पट्टधारी थे । आपका समय काल वीर निर्वाण संवत 649 से 731 (82 वर्ष) का था । इन्होंने ही नाडौल में लघुशांती की रचना की थी ।

आचार्य मानदेव सूरि ने कुपनगर (नाडोल के पास) चातुर्मास किया परंतु वहाँ हो रहे मासभक्षण शिकार और हिंसा को देखकर विहल हो उठे । उन्होंने इस वातावरण को देख कर चामुण्डा माता को आव्हान कर ध्यान में बैठ गए । चामुण्डा माता ने जब मानदेव सूरि की व्यथा जानी तो उसने एक दिन शेरनी का रूप धारण कर वहाँ के राजा देपालजी के पुत्र को उसकी माता की गोद से उठाकर जंगल में ले गयी ।

चारों और हाहाकार मच गया । राजा का पुत्र गायब हो गया । बहुत खोज की, पुत्र नहीं मिला । इधर मानदेव सूरिजी विहार कर रहे थे तो उन्होंने देखा कि एक शेरनी की गोद में बच्चा है और वह दूध पान कर रहा है । आचार्य भगवंत ने ज्ञान से जाना कि शेरनी और कोई नही है भवानी माता (चामुण्डा) ही है ।

राज्य के सभी मानव इकट्ठे हुए और राजा देपाल को कहने लगे, राजन ! यहाँ बहुत बड़े महात्मा आये हुए है । जिनसे शायद जानकारी मिल सके । राजा देपाल अपने सामन्तो को लेकर आचार्य भगवंत के पास पहुँचे और अपनी व्यथा सुनाई ।

आचार्य भगवंत ने ध्यान से सुनकर कहा कि दक्षिण दिशा में जाओ तुम्हारा पुत्र मिल जायेगा । राजा अपनी प्रजा और सामन्तों के साथ दक्षिण दिशा में गया परंतु शेरनी की गर्जना सुनकर भागकर वापस लौट आए और मानदेव सूरि को जो घटना हुयी वो बतायी ।

आचार्य भगवंत ने कहा है राजन इस प्रकार जाने से भला शेरनी आपको पुत्र कैसे लौटा देगी । तुम वहाँ जाओ और नवकार मंत्र तथा भगवान महावीर को ध्यान करते हुए मेरा नाम लो । तुम्हे तुम्हारा पुत्र मिल जायेगा । देपालजी सामंतो के साथ फिर वहीं पहुँचे और नवकार मंत्र महावीर और मानदेव सूरि का नाम लेने से देपाल पुत्र को शेरनी ने लौटा दिया और जंगल की और चली गई ।

चारों और खुशीयाँ छाने लगी । देपाल अपनी प्रजा के साथ मानदेव सुरी के पास आया और कहने लगा हैं प्रभु मैं आपकी क्या सेवा कर सकता हूँ ? आचार्य भगवंत ने कहा हम साधु है, हमें कुछ नहीं चाहिये और आप जैन धर्म स्वीकार कर अपने कर्मो का क्षय करो । राजा देपाल एवं प्रजा ने जैन धर्म अंगीकार किया । बालक का नाम आसधरजी दिया । क्योंकि बालक सिंहनी के पास मिला था, अत: उनका नाहर गोत्र आचार्य द्वारा दिया गया । इस प्रकार आसधरजी से नाहर वंश का प्रारम्भ हुआ । वे ही नाहरों के पित्र पुरूष हैं । यह घटना वीर निर्वाण संवत 717 (विक्रम संवत 247 तथा इसवी संवत 190 की है ।)

नाहरों की कुलदेवी

१) किंवदन्ती हैं कि आसधरजी की पीढ़ी में किसी समय दो प्रतिभाशाली पुत्र हुए । एक का नाम सिंहोजी तथा दूसरे का नाम श्रवणजी । सिंहोजी को ही साहुजी अथवा शहाजी के नाम से भी उद्वत किया गया है । इनकी प्रतिभा देखकर जोधपुर के महाराज राव जोधाजी ने दोनों को अपने राज्य में बुला लिया । एक भाई को राज्य का प्रधान तथा दूसरे को दीवान नियुक्त कर दिया । जिनका परिवार प्रधान बना वो नार कहलाये तथा जिनका परिवार दीवानजी बना वे नाहर ही रहे । ये नाहर गोत्री दिवानजी आस–पास के गांवो से कर–वसुली करते थे । उसी में से दो–चार टका दलाली लेते थे, शेष रकम महाराज के खजाने में जमा कराते थे । एक बार दीवानजी चांदी, रकम, नगदी आदि लेकर आ रहे थे, तब डाकूओं ने घेरा डाल दिया और मारने पर आगये । मृत्युभय से नाहरजी ने चामुंडा देवी (सच्चायी माता) को याद किया । तब सच्चायी मॉ, भवानी देवी का रूप लेकर लोहगढ़ (वर्तमान नागोर) के पास कैर के वृक्ष में प्रकट हुई । गड़गडाहट की आवाज हुई । कई डाकू मर गये, कुछ अंधे हो गये, शेष भाग गये । उसी दिन भवानी माता ने कहा ओसियो में (सच्चायी माता) को कई जातिवाले पुजते है परंतु मैं नाहर वंश के लिए यहाँ पर वास करूँगी । उसी दिन के बाद नाहर (दीवानजी) परिवारवालों ने भवानी माँ (गागल माता) की स्थापना प्रारम्भ कर दी । यह घटना वि.सं. 1050 के आसपास की बताते हैं । वर्तमान में नागोर दुर्ग के उपरी परकोटे पर एक छोटी मंदिरी बनी है – वही देवी स्थापना का मूल स्थान माना गया है ।

२) एक अन्य किवंदन्ती के अनुसार, जब डाकूओं ने नाहरजी दीवान पर हमला किया तब स्मरण करने पर भवानी माता प्रकट हुई। डाकूओं को पराजित कर माता ने कहा कि आज से मेरा स्थान इसी क्षेत्र में होगा, अत: तुम लोहगढ (नागोर) के दुर्ग में मुझे बिठाओं तथा आसोज सुदी अष्टमी के दिन मेरी पूजा करो । तब दीवानजी ने भवानी माता की स्थापना लोहगढ दुर्ग (नागोर किले) में की । तब से वे ही नाहरों की कुलदेवी हैं ।

३) आसधर को भवानी माता ही व्याघ्री का रूप लेकर जंगल ले गई थी जहाँ माता ने आसधर को अपने स्तनो से दूध पिलाया । इसलिये शेरनी पर सवार भवानी माता ही नाहरों की कुलदेवी हो सकती हैं ।

४) नागोर के किले में भवानी माता के मंदिर के समीप ही एक भेरू मंदिर है जहाँ खेतलिया भेरू स्थापित हैं । ये खेतलिया भेरू, नाहरों के भेरूजी हैं । माताजी के मंदिर के समीप ही खेतलिया भेरूजी का स्थान होना दर्शाता है कि नागोर दुर्ग का मंदिर ही नाहरों की कुलदेवी का मूल स्थल हैं ।

५) भवानी माता को चामुंडा महिसासुर मर्दिनी, व्याघ्रीदेवी आदि अन्य नामों से पहचाना जाता हैं । ये शेरनी की सवारी करती हैं ।

भवानी माता एवं शेरनी पर सवार अन्य माताओं में एक विशिष्ट अंतर यह है कि अन्य माताओं की शेरनी का मुख बायीं और होता है जबकि व्याघ्री (भवानी) माता की शेरनी का मुख दाहिनी और. नागोर किले में स्थित शेरनी का मुख दाहिनी ओर है । संभवत: यही बात इस स्थल को नाहरों की कुलदेवी का स्थल मानने हेतू पर्याप्त है ।

६) वर्तमान में जो नाहर गोत्रीय लोग है, संभवत: उनकी कुलदेवी

इस प्रकार बदलती रही :–

(क) जब तक परमार राजपुत के रूप में उपकेषपट्टन (ओसिया) में रहे तब तक वहाँ स्थित चामुंडा देवी को वे देवी रूप में पूजते रहे । इस पूजन विधि में बलि एवं मांस चढ़ाना जायज रहा ।

(ख) जब ये लोग परमार राजपुत से श्रेष्ठि गोत्रीय ओसवाल महाजन जैन बने तब इसी चामुंडा माता को सच्चायी माता के नाम से अपनी कुलदेवी मानकर पूजते रहे । परंतु बलि चढाना, हिंसा करना, मांस खाना, आदि बंद कर दिये ।

(ग) कुछ परमार जब माहेश्वरी बने तब मुंधडा की मुंधदेवी को कुलदेवी के रूप में पूजा ।

(घ) नाहर गोत्र पाने पर सभी नाहरो द्वारा भवानी माता (व्याघ्री माता) को कुलदेवी मानना प्रारम्भ किया । नाहरों की कुलदेवी के रूप में भवानी माता की प्रथम स्थापना नागोर दुर्ग में की ।

उपरोक्त तथ्यों के आधार पर नागोर दुर्ग में स्थित भवानी माता मंदिर को ही नाहरों की कुलदेवी का मूल स्थल मानना उचित होगा ।

कुलदेवी की मान्यता

नाहर परिवार के भाट, पंडित आदि से मौखिक रूप में जो ज्ञात हुआ वह इस प्रकार हैं :–

क्षत्रिय परिवारों में देवीपूजा की परंपरा इस देश की पुरातन संस्कृति का एक अंग है । यद्यपि देवीपूजा शैवधर्मी की मान्यता है

लेकिन महाजनों तथा क्षत्रिय राजपुतों ने भी इसे बखूबी अपनाया। राजपूताना, मेवाड़, मारवाड़, पुरातन गुर्जर, मध्य प्रदेश, मालवा, आदि स्थानों में चामुंडा अथवा भवानी माता को कुलदेवी के रूप में पूजा जाता रहा है। माना जाता है कि कुलदेवी की पूजा, परिवार में वैभव तथा सम्पन्नता लाती है। कुलदेवी, कुल की रक्षा करने के साथ-साथ वंशवृद्धि भी कराती है। कुछ परिवार कुल-देवता तथा भैरवजी की पूजा भी करते हैं।

जब महाजन वंश का ओसिया क्षेत्र तथा मरुप्रदेश के अन्य स्थानों से प्रवसन शुरू हुआ और वे रोजी-रोटी तथा प्रतिष्ठा संपन्नता की तलाश में अन्यत्र स्थानों पर जाने लगे तब यह प्रश्न उठा की दूर रहकर वे कुलदेवी की पूजा कैसे कर सकेंगे ? अनेक ब्राह्मणों, पंडितो तथा जैन मुनियों से परामर्श कर उक्त समस्या का समाधान ढूंढा गया। दो सर्वमान्य उपाय सामने आए।

१) दूरस्थ जाने वाले गृहस्थ अपने साथ अपनी कुलदेवी के प्रतीक के रूप में धातु की चार इंच से बारह इंच लंबाई की प्रतिमा बनाकर ले जावे तथा अपने घर के पवित्र स्थान में मंदिरनुमा आलिये में उसे स्थापित कर उसकी दैनिक अथवा वार-त्यौहार पूजा करें। देवी प्रतिमा हेतु तांबा, पीतल अथवा चांदी धातु उत्तम बताई गई। स्वर्ण प्रतिमा भी बनाई जा सकती है।

२) दूसरे उपाय के अंतर्गत देवी प्रतीक के रूप में गृहस्थ अपने घर में रसोडे (किचन) के समीप किसी दीवार (पूर्वमुखी उत्तम) पर गोबर का लेप करके एक थान बनावे तथा माताजी के इस थान की वार-त्यौहार पूजा करे। थान का तात्पर्य प्रतिमा विहीन कुछ प्रतीक चिन्हों की स्थापना से है। पूजन के समय सूखे गोबर (कंडा) की

धूप लगावे तथा लापसी, नारियल आदि का भोग चढ़ावे। ऐसा थान (स्थापना) निजी स्वामित्व के मकान में ही स्थापित करें। यदि मकान किराये का हो तो देवी प्रतीक के रूप में अल्प चिन्ह ही दीवार पर मांडें, जैसे त्रिशुल का चिन्ह, सात या नौ कुंकुम की बिंदिया (टिकीयाँ) आदि।

कालान्तर में दीवारों पर गोबर लेप के स्थान पर चूना अथवा पेंट कराने की प्रथा चली।

अनेक वंशो ने प्रथम, तथा कईयों ने द्वितीय उपाय अपनाया। दोनों प्रकार के वंशो में एक विशेष परंपरा जो सर्वमान्य रही वह यह थी कि बच्चे के जन्म, जडूला, शादी आदि विशेष अवसरो पर देवी के मूल स्थान पर जाकर ही पूजन करते हैं।

नाहरों का प्रवसन

प्रारम्भ में नाहर गोत्रीय परिवार राजस्थान के चन्द भूभाग में ही सीमित थे। जोधपूर, बिकानेर, नागोर तथा ओसिया क्षेत्र के आसपास ही वे निवास करते थे। खेती एवं व्यापार इनका प्रमुख धंधा था। कालांतर में, परिवार बढ़ने तथा आय के स्त्रोत सीमित हो जाने से, इन्होंने बाहर की ओर प्रवसन प्रारम्भ किया। मारवाड़ तथा मरू क्षेत्रों में दुर्भिक्ष भी इस प्रवसन का बड़ा कारण रहा।

सर्वप्रथम नाहर परिवारों का निकटतम क्षेत्रिय, मैदानी एवं धनधान्य से धनी क्षेत्रों में प्रवसन हुआ। मैदानी क्षेत्रों में पंजाब तथा पठारी एवं धनी क्षेत्रों में मालवा प्रदेश को सर्वाधिक पसंद किया गया।

फलस्वरूप नाहरों का सर्वप्रथम प्रवसन पंजाब की और हुआ तत्पश्चात् मालवा की और । जो लोग पंजाब गये वे अधिकांश तादाद में लाहौर तथा उसके आसपास के क्षेत्रों में बस गये । कुछ लोग मुल्तान क्षेत्र में भी बसे । लाहौर बसनेवाले नाहर, लाहोरी कहलाए । इन्ही परिवारों के वंशज में से कुछ लखनऊ आकर बसे तथा कुछ दिल्ली गये । दिल्ली के ही कुछ नाहर परिवार अजमेर आकर बसे ।

जो लोग पंजाब की और नहीं जा पाए, उनके कदम मालवा की और बढ़े । कालान्तर में लाहौर में रहनेवाले नाहर परिवारों से भी कुछ परिवार मालवा में आए । अजमेर बसनेवाले नाहर परिवारों में से सर्वाधिक परिवार मालवा में आकर बसे । मालवा देश की आबोहवा तथा यहाँ की उपजाऊ मिट्टी और भोले-भाले लोगो ने नवागन्तुकों का मन इस तरह मोह लिया कि मारवाड़ क्षेत्र के कुछ और नाहर परिवार भी मालवा में ही आकर बसे गये । यहाँ ये लोग वर्तमान मन्दसौर, धार, रतलाम तथा इंदौर जिले के शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्रों में फैल गये । मन्दसौर के पास रामपुरा, नीमच के पास जाट, धार के पास बदनावर, इंदौर के पास नागदा ग्राम आदि स्थानों पर इनकी सघन बस्ती हो गई ।

शेष जो लोग अपनी भूमि से लगाव तथा खेती व्यापार आदि के कारण पलायन नहीं कर पाये थे उन्हें भी कालान्तर में दुर्भिक्ष, विदेशी उत्पीडन तथा स्थानीय परिस्थितियों ने अपनी भूमि छोडने को विवक्ष कर दिया । तब अर्थोपार्जन के लिये लोग एक बार फिर पलायन पर विचार विचार करने लगे । यह काल था उन्नीसवी सदी का, ईसवी सन 1850 के आसपास । (इसी काल में, ईसवी सन 1860 में, अंग्रेजों द्वारा देश में रेल सेवा प्रारम्भ कर दिये जाने से

आवागमन सुगम हो गया ।) इस सदी में 1850 से 1900 के मध्य करीब 80 लाख लोग अपना पैत्रक स्थान छोडकर बाहर बस गये । इनमें अधिकांश ओसवाल तथा अन्य महाजन परिवार थे । इस बार अधिकांश ओसवाल परिवार देश के दक्षिणी, पूर्वी तथा दक्षिण-पूर्वी क्षेत्रों में गये । असम, कलकत्ता, कर्नाटक तथा वर्तमान का चेन्नई प्रमुख पसन्द थे ।

कलकत्ता के नाहर परिवार में अनेक लोग अर्थ तथा धर्म में अग्रणी रहे । रायबहादुर पद्वी प्राप्त की तथा राजनीति में भी यश अर्जित किया । उसी प्रकार तमिलनाडु (मद्रास) में बसे नाहर परिवारों ने, जो आज के चेन्नई शहर में निवास करते हैं, अच्छा नाम कमाया । आड़त, ब्याज-बट्टा तथा दलाली का धंदा करके ये लोग वर्तमान में यशेष्ट संख्या में चेन्नई में बसे हैं ।

मारवाड़ से मालवा तथा राजस्थान के अन्य इलाको में आनेवाले नाहर परिवार भी धन-धान्य से पूर रहे एवं समाज कार्यों में अग्रणी रहे । आज भी मालवा के क्षेत्रों में नाहर परिवारों की बड़ी संख्या निवास करती है तो सीमावर्ती राजस्थानी इलाकों में भी वे भरपूर संख्या में उपस्थित हैं । ना केवल व्यापार अपितु उद्योग, नोकरी, धर्मकार्य, दान, समाज-सेवा, संघ सेवा, आदि में ये लोग अग्रणी हैं । विगत 1800 वर्षो के इतिहास में नाहर गोत्र ने अनेक प्रवसन किये । वे जहाँ भी गये, अपनी पहचान बनाते गये । आज विदेशों में भी नाहर परिवार यथेष्ट संख्या में अपनी उपस्थिति दर्ज करा चुका है । इन्होंनें अमेरिका में जैन सेंटर ऑफ अमेरिका की स्थापना की तथा अनेक मंदिर बनाए एवं जैन मुनियों के अमेरिका में चातुर्मास कराये । नाहर परिवार वहाँ भी अपनी सम्पन्नता तथा धार्मिकता की पहचान बना चुके हैं ।

अंत में

चन्द तथ्य सर्वमान्य है जो निम्न प्रकार है :-

१) नाहरों के आद्य पुरूष आसधर हैं।

२) नाहर गोत्र की उत्पत्ति वी नि.सं. 717 (इसवी सन 190) में हुई ।

३) नाहर गोत्र की स्थापना आचार्य मानदेवसूरि द्वारा की गई। ये वही मानदेवसूरि है जिन्होंने लघुशांति स्तवन की रचना की थी। आपका निधन वीर नि.सं. 731 में हुआ।

४) देपाल पुत्र आसधर को एक सिंहणी उठाकर ले गई थी। बालक को भूख लगने पर उसे नाहारनी ने स्तनपान कराया । इसी आधारपर आसधारजी की नाहर गोत्र स्थापित हुई। आचार्य के अनुसार नाहारनी का वेष शासनदेवी ने ही धारण किया था । इसीलिये नाहरों की कुलदेवी का संबंध नाहरनी (व्याघ्री या सिंहणी) से है।

इसी आधार पर नाहर लोग शेरनी सवार भवानी माता को अपनी कुलदेवी मानते है।

५) नाहरों की कुलदेवी का मूल स्थल नागोर दुर्ग में है।

६) नाहरों के भेरूजी खेतलियाजी हैं।

श्री कुलदेवी की पूजन विधी

१) माता भवानी को पुजनेकी चैत्र शुद्ध अष्टमी नवमी असौज शुद्ध अष्टमी नवमी पूजा करे ।

परणे, जन्मे सव्वा रुपया माताजीका रखे । राता धोळा सव्वा हात का कपडा रखे । लापशी, चावळ, शेर, सोहनी मीठी धागडी, खाजा, भुजिया, दही कटोरी रखे । और नारीयल बधारना। बेटा जन्मा सव्वा पाच शेर तेल बेटी जन्मी ढाई शेर तेल जळवा तक जलाए । तेल बचे तो गुलगुला करके शिरनी बाट देना । पिछे कंदोरा बांधे । जडूला छे मास रखे । नागोर जडूला उतारना अच्छा है। सवासीनी जडूला जमा करे। बेन, सवासिनी गोदमे बच्चा बिठाकर जडूला निकाला तो भी चलता है। उस दिन लापसी केरना, माताजीने धोक देवना। बेन बेटी जिमाना। भेरुजी को शिंदूर तेल आदी देना। जन्मा परण्या राती जोगा देना।

लाल व सफेद परायाँ, प्रत्येक सवा हाथ, सन्दरूप नारीयल, बाजता व शिंदूर ।

चांदी, तांबा या पीतल के माताजी व खेतलाजी के फूल तथा नागदेवता का वीटा (चेहरा), वजन प्रत्येक का कम से कम ११/४ तोला, लापसी ९१/४ कि.ग्रं., दलिया की गुड में बनावें।

कुंकु, सिन्दुर, अभिर, गुलाल, मौला, अत्तर, अगरबत्ती, कपूर, दो पीतल के दीपक, दो नारियल गोटा, दो सवा रुपये, दो कटोरी में गहू, गाय का दूध एक पाव, शुद्ध जल का घडा, दो गिलास, एक पक्षाल हेतू पात्र, दोथाली आरती हेतू, एक मीटर सफेद कपडा अंगलुसणा हेतू, पुष्प इत्यादी, दो थालों में

लापसी ।

नोट : स्थापना पति पत्नी नये कपडे पहनकर (स्नान करके) सेडा बंधी मौड बांधकर करावे ।

ब्राह्मण की साक्षी व ढोल थाली के साझ में विराजमान करावे ।

स्थापना पूर्ण होनेपर माताजी, खेतलाजी व घर में अन्य पूजनीय देवी देवताओं को नमन करावे व परिवार में सभी बडों को प्रणाम करें । और आशिश लेरावे ।

अपने घर में पूजनीय अन्य देवी देवताओं को भी नारियल एवम् प्रसाद्दी चढावें । दीपक जोत करावे ।

पूर्वजो (पराजी–परीजी) की प्रशादी मात्र परिवार के लोग उपयोग में ले सकते है ।

इस दिन बनायी गयी सभी प्रसादी बासी नही रहनी चाहिए ।

''शिवशान्ति''.

यह विधी मूल भाषा में जैसी लिखी गई थी वैसी ही प्रकाशित की गयी हैं ।

माताजी एवं खेतलाजी के बन्धन

१. परिवार में कोई भी व्यक्ति सादा (फ्लेन) काला वस्त्र पही पहनें, उसमें डिजाईन हो तो गुना नही ।

२. औरतें कन्दोले पीअर के हों तो पहन सकती हैं । ससुराल के नही ।

३. पाँवो में तोडे बिना घुंगरों के पहने । अगर घुंघरे पीअर से लाये हो तो गुना नही ।

४. मासिक धर्म के समय महिलायें तीन दिन रसोई नही बनावे ।

५. चौथे दिन स्नान करके कर सकते है । पाँचवे दिन स्नान करके दीपक कर सकते है ।

६. **स्थापन करते समय ध्यान रखने योग्य बातें ।**

१) घर में स्त्रीधर्म के समय या सूतक के समय स्थापना नही होती ।

२) स्त्री धर्म के समय चार दिन दीपक न भर, पाँचवे दिन स्नान करके भरें ।

३) दीपक परिवार में कोई भी व्यक्ति शुद्धता से भर सकते है ।

४) सु अवसरों पर कुलदेवताओं को प्रसादी चढानी ही चाहिए ।

५) घर में बनाई गई व गुड की मिठाई श्रेष्ठ गिनी जाती है ।

६) दीपक या अगरबत्ती से पाठ या परायां खंडित न हो इसका पूर्ण ध्यान रखावें ।

७) बालक जन्म या पुत्र शादी के अवसर पर पराईयां व दोनों नारियल नये विराजमान करावें ।

८) विराजमान विधी छेडा बन्धी बांधकर करावें ।

९) राति जोगा देते समय दो घी के अखंड दीपक जलावें ।जोत देरावे, गुड की प्रसादी करावे । नारियल की जोत व दो नारियल चडावें ।

७. माताजीका पहनेका पोशाख नाहर गोत्रमें पेहननेको मना है । हाथीदंतकाचुडा घुंगरा का पैंजन, बाजनवाला गहना, दातमे चूक और बच्चोके लिए पालना लेना मना है । दुसरे देवे तो ले सकते हो काम मे ला सकते हो ।

८. भैरुजी, खेतालाजा, क्षेत्रपाल सिहाडी सोनडाका और नागोरका पूजन माघ शुद्ध सप्तमी भादवा शुद्ध सप्तमी ने पूजन करे । छीक का भी पूजन तिन दिन करे ।

आव्हान

प्रिय नाहर बंधु,

नाहरों की कुल देवी का मूल मंदिर नागौर किले में स्थित है। यह मंदिर वि. सं १०४०-१०५० में स्थापित किया गया था । वास्तव में मंदिर के नाम पर एक छोटी सी मंदिरी किले के पिछले भाग के परकोटे में उपर की ओर स्थित है । उपर चढ़ने हेतु बड़ी सीड़ीयां हैं जिन पर चढ़ना बुजुर्गो तथा महिलाओं के लिए दुष्कर है । इसके अतिरिक्त, नागौर किला निजी सम्पत्ति है जिस पर जोधपुर महाराजा का स्वामित्व है । निजी स्वामित्व तथा पुरातत्व महत्व का होने से किले के अन्दर स्थित कुलदेवी के मंदिर को हम न तो किसी प्रकार का नया स्वरूप दे सकते हैं, न ही उसमें श्रद्धावश कोई नवीनीकरण कार्य कर सकते है । नाहर श्रद्धालुओं के मन की भावना मन में ही दबी रह जाती है। व्याघ्री भवानीमाता लगभग १००० वर्षो से इसी हालत में वहां बिराजी हुई है और नाहर लोग सिवाय मन मसोस कर रहने के शेष कुछ नहीं कर पाते है ।

उपरोक्त दुविधाओं को देखते हुए पूरे देश के नाहर बन्धु चाहते हैं कि कुलदेवी माता का मंदिर नाहर समाज के स्वामित्व का होकर आसान पहुँच में हो जहाँ बुजुर्गो, बच्चों, तथा महिलाओं को किसी प्रकार की कोई परेशानी नहीं हो तथा जहाँ समय समय पर हम श्रद्धानुसार नवीनीकरण कार्य कर सकें ।

इस भावना को ध्यान रखते हुए **नाहर भवानी माताजी ट्रस्ट** का गठन किया गया हैं । कुछ शहरों के

नाहर परिवार के सदस्यों ने एक नवीन मंदिर परिसर निर्माण का बीड़ा उठाया । प्रयास भागीरथी है लेकिन आप सबका सहयोग इस प्रयास को वास्तविक धरातल पर ला सकता है। इस कार्य हेतु नागौर से ४.५ कि.मी. दूर अजमेर रोड़ पर अट्ठीयासन स्थान पर (११.५ बीघा) लगभग २ लाख स्के. फुट भूमि क्रय कर ली गई है। यहाँ विशाल सुंदर नाहर कुलदेवी का भव्य मंदिर, आधुनिक धर्मशाला, भोजनशाला, कार्यालय, आदि बनाने की योजना है। संभावित खर्च सात से आठ करोड़ रूपये हैं। यह कार्य समूचे नाहर परिवार का है तथा सभी नाहरों को इस पुनीत यज्ञ में आहुति देना है। संपूर्ण निर्माण कार्य डेढ़ से दो साल में पूर्ण करने की योजना है। कुछ नाहर भाईयोंने आपना योगदान सर्मपित किया हैं उन्हें बहुत बहुत धन्यवाद ।

सभी नाहर बंधुओं से अनुरोध है कि प्रत्येक सदस्य अपनी श्रद्धानुसार अधिक-से-अधिक योगदान अवश्य दें। नाहर सदस्यों को एकता की मिसाल पेश करते हुए इस पावन कार्य को पुरा करने हेतु पीछे नहीं हटें, क्योंकि यही हमारा इतिहास रहा है। आइये, और तन. मन. धन से इस प्रयास को सार्थक बनावें। आपका योगदान चैक से भेजें अथवा निम्न खाते में जमा करावें-

खाता नाम - नाहर भवानी माताजी ट्रस्ट

बैंक नाम - स्टेट बैंक ऑफ इंडिया

शाखा - एलिफंटा गेट, चैनई